**ओ३म्**

**‘धर्म प्रवतर्कों व प्रचारकों के लिए वेद-ज्ञानी होना अपरिहार्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

देश व विदेशों में नाना मत मतान्तर, जो स्वयं को धर्म कहते हैं, सम्प्रति प्रचलित हैं। इनमें से कोई भी वेदों को या तो जानता ही नहीं है और यदि वेदों का नाम आदि जानता भी है तो वेदों के यथार्थ महत्व से वह सर्वथा अपरिचित होने के कारण वेदों का उपयोग नहीं कर सकता। क्या बिना वेदों का ज्ञान प्राप्त किए किसी सत्य मत की स्थापना की जा सकती है? हमारा अध्ययन कहता है कि बिना वेदों के यथार्थ ज्ञान के धर्म की स्थापना नहीं की जा सकती। यदि की गई है व की जायेगी तो वह धर्म न होकर मत व मजहब होगा और वह पूर्ण सत्य मान्यताओं पर आधारित नहीं हो सकता है। यह बात सभी मतों व सम्प्रदायों पर पर समान रूप से लागू होती है। वेद के ज्ञान से विहीन मत पूर्ण सत्य क्यों नहीं होंगे, इसका कारण यह है कि ईश्वर ने इस ब्रह्माण्ड तथा मनुष्यों को बनाया है। ईश्वर सर्वव्यापक व सर्वज्ञ है और मनुष्य एकदेशी, ससीम व अल्पज्ञ है। ईश्वर के सर्वव्यापक और सर्वज्ञ होने तथा मनुष्यों व अन्य सभी प्राणियों को उत्पन्न करने से केवल वह ही जानता है कि जीवात्मा को क्या करना चाहिये और क्या नहीं? कोई भी मनुष्य, विद्वान या महापुरूष जो भी पूर्ण सत्य धर्म को जानने का प्रयास करेगा उसमें वह पूर्णतः सफल नहीं हो सकता। अल्पज्ञ होने के कारण वह ईश्वर की सहायता के बिना सत्य ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। अतः उसे ईश्वर की शरण में जाना ही होगा और उससे पूछना पड़ेगा कि मनुष्यों के कर्तव्य और अकर्तव्य क्या हैं? ईश्वर से पूछने पर उसे पहले ईश्वर में एकाकार अर्थात् समाधिस्थ होना पड़ेगा। सभी के लिए यह सम्भव नहीं होता। अतः वह स्वयं, अपने आचार्यों व विद्वानों से ईश्वर के प्रति मनुष्यों के कर्तव्यों के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे जो कि कुछ व अधिकांश सत्य हो सकता है परन्तु उसका कुछ या बड़ा भाग असत्य या अर्धसत्य भी हो सकता है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 इस कारण मनुष्य सत्य धर्म का निर्धारण नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में मनुष्य के सामने क्या विकल्प बचता है? इसका एक ही विकल्प है कि संसार में सबसे प्राचीनतम ज्ञान क्या है, इसे जानने का प्रयास करे। ऐसा करने पर उसे वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, बाल्मिकी रामायण, महाभारत, जेन्दावस्था, बाइबिल, कुरआन, बौद्धों और जैनियों के मत वा धर्म की पुस्तकें व 18 पुराण आदि प्राप्त होती है। अब उसका कर्तव्य है कि वह एक-एक करके सभी ग्रन्थों का पूर्ण निष्पक्षता, सूक्ष्मता व गम्भीरता से अध्ययन करे। इसमें वह अनेक विद्वानों की सहायता भी ले सकता है। इस अध्ययन के बाद जो बातें सब पुस्तकों में निर्विवाद हैं उन्हें धर्म माना जा सकता है या कहें कि वह मान्यतायें व सिद्धान्त निर्विवाद रूप से संसार के प्रत्येक व्यक्ति का धर्म हैं। अब जिन विषयों में एक से अधिक मत या विचार सामने आते हैं, उन्हें लेकर गोष्ठी व चर्चा की जानी चाहिये। पहली कसौटी तो यह हो सकती हैं कि क्या वह मान्यतायें तर्क व युक्ति से सिद्ध होती हैं। यदि वह तर्क संगत हैं तो तर्क संगत को स्वीकार कर उनका संग्रह करना चाहिये और तर्कहीन, युक्ति विरूद्ध एवं सृष्टि कर्म के विरूद्ध मान्यताओं को त्याग देना चाहिये। इस प्रकार तर्क व युक्ति आदि की कसौटी पर जो बाते सिद्ध हैं, वह स्वीकार्य और उसके विपरीत बातें अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड व अकर्तव्य होती हैं। उन बातों को जो तर्क संगत व युक्ति संगत हैं, उन्हें वेद के साथ तुलना कर देखना होगा कि क्या इनमें कोई मान्यता या सिद्धान्त वा बात वेद विरूद्ध तो नहीं है? वेद विरूद्ध मान्यताओं और वेद की मान्यताओं को तर्क, युक्ति व सृष्टि कर्म के अनुकूल होने पर अथवा निभ्र्रान्त होने पर ही स्वीकार किया जा सकता है। यह कार्य महर्षि दयानन्द ने सन् 1836 से आरम्भ कर सन् 1860 तक किया और उसके बाद 30 अक्तूबर, 1883 को अपने देहावसान तक जारी रखा। उन्होंने पाया कि वेदों की कोई भी बात तर्क विरूद्ध या युक्ति विरूद्ध नहीं है। वेदों की सभी बातें सृष्टिक्रम के अनुकुल हैं व सिद्ध योगी उनके निभ्र्रान्त होने का अनुभव अपनी समाधि अवस्था में करता है। यह भी रोचक तथ्य है कि असम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था केवल वैदिक व सनातन मत के कुछ थोड़े से ही लोगों को प्राप्त होती है, अन्य मत वालों को इसका लाभ नहीं मिलता। इस कारण उन्होंने वेदों में विहित मान्यताओं को धर्म स्वीकार किया है। अन्य सभी मत-मतान्तरों की बातें जो वेदों के सिद्धान्तों के विपरीत या विरूद्ध न हों उन्हें भी उन्होंने ग्राह्य व धर्म स्वीकार किया जाना चाहिये या वह धर्म के अन्तर्गत आयेंगी। इस प्रकार से जो मनुष्यों के कर्तव्य व मान्यतायें सत्य सिद्ध होती हैं वही सारे संसार का धर्म कहलाती हैं व हो सकती हैं। इस प्रकार से यह धर्म सारे संसार के लोगों के लिए एक ही सिद्ध होता है।

 यदि हम ऐसा नहीं करते तो फिर हमें अन्य-अन्य मत का अनुयायी बनना पड़ेगा जैसे कि हम वर्तमान में हैं। इससे हम मनुष्य जन्म के उद्देश्य, जो इस संसार को बनाने वाला ईश्वर हमसे अपेक्षा करता है और जिससे जीवन की इस जन्म व परजन्म में उन्नति व मोक्ष आदि की प्राप्ति होती है, उस करूणासिन्धु व दयानिधान ईश्वर के निकट जाने के स्थान पर हम उससे दूर होते जायेंगे। इससे हानि हमारी ही होनी है, इसे सभी मनुष्यों को समझना है। ईश्वर क्योंकि अनादि, अजंन्मा, नित्य और सर्वज्ञ है और इस सृष्टि का रचयिता, पालक और इसका नियंत्रक है, समस्त प्राणी जगत का वह आधार व रचयिता एवं पालक है, अतः उसके द्वारा प्रवर्तित धर्म ही मनुष्य धर्म हो सकता है।

 अब हम इस प्रश्न पर विचार कर लेते है कि क्या ईश्वर धर्म प्रचार के लिाए सृष्टि के आदि काल के बाद शेष अवधि में किसी मनुष्य को अपने पुत्र, मत-धर्म-प्रवर्तक, प्रचारक आदि के रूप में भेजता है? इसका उत्तर यह मिलता है कि ईश्वर ने सृष्टि की आदि में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा के द्वारा चार वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का ज्ञान दिया जो यथार्थ मनुष्य धर्म है। यह धर्म किसी एक जाति या समूह, सम्प्रदाय आदि के लिए नहीं अपितु संसार के सभी लोगों के लिए है। वेदों पर किसी एक जाति, मत या सम्प्रदाय के मनुष्यों का ही अधिकार नहीं है अपितु यह ज्ञान प्रत्येक मनुष्य के लिए है और वह इसको जानने, समझने व आचरण करने के पूर्ण अधिकारी हैं। यदि कोई यह समझता या मानता है कि वेदों पर किसी एक जाति, धर्म या सम्प्रदाय के लोगों का ही अधिकार है, इतर मतों के अनुयायियों व अन्यों को अधिकार नहीं है तो ऐसे लोग पहले भी अज्ञान ग्रस्त थे और आज भी अज्ञान ग्रस्त हैं। वेदों पर मानवमात्र व सभी जातियों, मतवादियों वा धर्मानुयायियों का समान अधिकार है। हां कोई वेद का दुरूप्योग न करे, इसका पूरा पूरा प्रबन्ध होना चाहिये। इस चर्चा से यह सिद्ध होता है कि वेद मानव धर्म है और इसके सत्य स्वरूप को जानकर इसका प्रचार करना ही उचित है। इससे इतर अन्य किसी धर्म की मनुष्यों को किंचित आवश्यकता नहीं है। जो वेद ज्ञान के पूर्ण अधिकारी या ज्ञानी नहीं है, उन्हें धर्म का प्रचार करने का अधिकार नहीं है जबकि आजकल इसके विपरीत हो रहा है। यदि वह ऐसा करेंगे या कर रहे हैं तो उनके अज्ञान व स्वार्थ के कारण देश व समाज पर इसका बुरा प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। चूंकि वेद स्वयं में सर्वांगीण व पूर्ण मानव धर्म है, वेद सब सत्य विद्याओं वा धर्म की प्रथम व अन्तिम पुस्तकें है, इसमें कोई कमी या त्रुटि नहीं है, अतः ईश्वर सृष्टि उत्पत्ति के बाद वेदों का ही ज्ञान देता है और उसके बाद वह किसी को मत-धर्म स्थापना के लिए नहीं भेजता है।

 आज कल हम देश भर में अनेक धर्म गुरुओं को प्रवचन आदि के द्वारा प्रचार करते हुए देख रहे हैं। यद्यपि वह प्रचार तो कर रहे हैं परन्तु उसे धर्म प्रचार की संज्ञा नहीं दी सकती। यह भी कहा जा सकता है कि गुरूडमों को बढ़वा दे रहे हैं। अभी पिछले दिनों हमने कई धर्म गुरूओं व गुरूडमों का कच्चा चिट्ठा जाना है। उनके व अन्य धर्म गुरुओं के प्रवचनों व उपदेशों में बहुत सा भाग वेदों के विरूद्ध होता है। बहुत कुछ उनकी अपनी मान्यतायें होती हैं जिसके पीछे उनके अज्ञान व स्वार्थ भी होते हैं। हमारे भोले व धर्म-अज्ञानी बन्धु अल्पज्ञ होने के कारण उनके निहित स्वार्थों को जान नहीं पाते और उनका अन्धानुकरण करते वह कर रहे हैं। उनका यह कार्य देश में एक सामाजिक समस्या को भी उत्पन्न कर रहा है। सबसे श्रेष्ठ समाज वही हो सकता है कि जहां सभी लोग एक मत व एक विचारधारा के मानने वाले हों। परमात्मा एक है, सत्य एक है अतः धर्म भी एक ही होना चाहिये जो कि ईश्वर की आज्ञा के पालन को कहते हैं। क्या ईश्वर की आज्ञायें अनेक मत संस्थापकों या प्रचारकों के अनुयायियों के लिए अलग-अलग हो सकती हैं? कदापि नहीं। वेद **‘समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।** तथा **समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।’**कहकर संसार के सभी मनुष्यों के लिए एक धर्म, एक मत का उदघोष करते हैं। अतः सभी को अज्ञानी व स्वार्थी गुरूओं के अन्धभक्त बनने से बचना चाहिये और स्वयं स्वाध्याय वा अध्ययन कर तथा सत्पुरूषों की शरण में जाकर ईश्वर के द्वारा सृष्टि के आरम्भ में दिये गये वेद ज्ञान को अपनाना, मानना व पालन करना चाहिये। इसी से उनके इस जीवन का और परजन्म का कल्याण होगा, यह सुनिश्चित है। धर्म जिज्ञासुओं को हम सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने का भी सुझाव देंगे। वेदों का यह भी शाश्वत व विशिष्ट सन्देश है कि संसार के सभी लोग एवं प्राणी परस्पर भाई-बहिन हैं और ईश्वर हमारा माता-पिता, आचार्य, राजा व न्यायाधीश है।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः 09412985121**